27

दूसरों के साथ प्रेमपूर्वक कैसे रहें

मत्ती 7:1-12; 3-12 आयतों पर एक निकट दृष्टि

पिछले प्रवचन में, हमने मत्ती 7:1-12 का अध्ययन किया था, जो सिखाता है (अन्य सिद्धान्तों में से) कि दूसरों के साथ प्रेमपूर्वक कैसे रहना है। बाइबल के इस हवाले से सम्बन्धों के बारे में मैंने छह सुझाव अर्थात दूसरों के साथ प्रेमपूर्वक रहने की छह अनिवार्यताएं बताने का वायदा किया था। पहला सुझाव 1 और 2 आयतों पर आधारित था: ''दोष मत लगाओ, कि तुम पर भी दोष न लगाया जाए। क्योंकि जिस प्रकार तुम दोष लगाते हो, उसी प्रकार तुम पर भी दोष लगाया जाएगा; और जिस नाप से तुम नापते हो, उसी से तुम्हारे लिए भी नापा जाएगा।'' इन आयतों से हमने दूसरों के साथ प्रेमपूर्वक रहने की अनिवार्यता नम्बर एक निकाली थी कि ''हम दोष लगाने वाले होना बन्द कर दें।'' उस सिद्धान्त के विषय में, मैंने सुझाव दिया था कि यीशु कम से कम पांच सामान्य व्यवहारों की निन्दा कर रहा था:

- अपने न्याय या निर्णय को अपनी पृष्ठभूमि, पूर्वधारणाओं और प्राथमिकताओं से प्रभावित होने देना।
- बिना सभी तथ्यों के या सभी परिस्थितियों को जाने जल्दबाज़ी में निर्णय करना।
- किसी दूसरे के उद्देश्यों के लिए न्याय करने का प्रयास करना।
- बेहतर सोचने के बजाय लोगों की तरह बद से बदतर संरचना पर आग में घी डालने का काम करना।
- न्याय करने में अपने निर्णय को करुणा और प्रेम से तोड़ने के बजाय कठोर, रूखे और कपटी होकर न्याय करना।

ये ऐसी कमियां हैं, जो हर इनसान में पाई जाती हैं। आप ऐसे व्यक्ति को जानते ही होंगे जिसमें ये सभी कमियां हैं, या नहीं जानते?

इस प्रश्न के लिए मुझे क्षमा करें। यह एक चालाकी भरा प्रश्न था। यदि आपके ध्यान में कोई आ गया है, तो आपने उस व्यक्ति को दोषी ठहराया हो सकता है। कम से कम, शायद मैंने आपको मत्ती 7:1, 2 का इस्तेमाल अपने लिए न करके दूसरे के लिए करने का दोषी ठहराया है। दूसरों के साथ प्रेमपूर्वक रहने के दूसरे सिद्धान्त का परिचय देने के लिए मैंने जानबूझकर ऐसा किया।

दूसरों के साथ प्रेमपूर्वक रहने की आवश्यकता #2:

पहले हमें अपने जीवनों में परिवर्तन लाने आवश्यक हैं (आयतें 3, 5)।

परिवर्तन के लिए हमें स्पष्ट तौर पर अपने बजाय दूसरों की ओर झांकना अच्छा लगता है। यीशु इस बात को समझता था। उसने कहा:

> तू क्यों अपने भाई की आंख के तिनके[1] को देखता है, और अपनी आंख का लट्ठा[2] तुझे नहीं सूझता? और जब तेरी ही आंख में लट्ठा है, तो तू अपने भाई से क्योंकर कह सकता है, कि ला मैं तेरी आंख से तिनका निकाल दूं। हे कपटी! पहले अपनी आंख में से लट्ठा निकाल ले, तब तू अपने भाई की आंख का तिनका भली भांति देखकर निकाल सकेगा (आयतें 3-5)।

इस पद में थोड़ी सी हंसी है। यीशु चुटकुले नहीं सुनाता था, परन्तु वह हंसाता अवश्य था[3]: किसी दूसरे व्यक्ति की आंख का तिनका देखने के लिए अपनी आंख से एक बड़ा सा लट्ठा आगे करते हुए अपने आप को सम्भालने की कोशिश करते व्यक्ति की कल्पना करें। क्या आपको वह बड़ा लट्ठा कभी इधर और कभी उधर झूलते हुए दिखाई दे रहा है, जिस कारण आस-पास खड़े लोग उसके सिर पर मारने से बचाने के लिए पक्षियों को उड़ाते हैं? यीशु हमें समझाना चाहता होगा कि जब हम उनसे बुरी स्थिति में हैं, जिनका हम न्याय करने की कोशिश कर रहे हैं तो यह *उपहासजनक* है।[4]

मसीह शास्त्रियों और फरीसियों के कपट पर भी विचार कर रहा होगा, परन्तु इस पद की सच्चाइयां हमें भी दोषी ठहराती हैं। अपनी ओर ध्यान न देकर दूसरों की कमियां निकालना कितना आसान होता है! आपको राजा दाऊद की कहानी याद है, जिसने बतशेबा के साथ कुकर्म किया था और उसके पति को मरवा दिया था (2 शमूएल 11)? नातान ने दाऊद को एक धनी आदमी की कहानी बताई थी, जिसने किसी निर्धन के मेमने को मार डाला था। दाऊद उस अपराधी[5] को ''फांसी'' पर चढ़ा देने को तैयार था, और तभी नातान ने उसे बताया कि ''तू ही वह मनुष्य है!'' (2 शमूएल 12:1-7)। तब फांसी पर चढ़ाने के बजाय, दाऊद एक प्रार्थना सभा के लिए तैयार हो गया (2 शमूएल 12:13; भजन

संहिता 51; 32)।

दूसरों के साथ प्रेमपूर्वक रहने के मामले में, यीशु हम से पहले यह देखने के लिए कि *हमें* किस परिवर्तन की आवश्यकता है, *अपने आप* की जांच करने को कहता है।

संयोग से, आयत 3 के पहले भाग में मसीह द्वारा निन्दित दोष लगाने की बातों की सूची में एक और बात जोड़ी जा सकती है। ''देखता'' के लिए यूनानी शज़्द का अर्थ ''परखना, बारीकी से जांचना'' है। तिनके को देखना आसान नहीं होता। जब कोई आपसे कहे कि ''मेरी आंख में तिनका है,'' तो आप सज़्भवतया उसे तब तक नहीं देख सकते, जब तक काफ़ी रोशनी न हो और आप उसके बहुत, बहुत निकट न हों। बुरे निर्णय लेने की आदतों में बहुत अधिक पाया जाने वाला गुण जोड़ा जा सकता:

- लोगों में भलाई के बजाय बुराई देखना; किसी की आलोचना के लिए उसमें कमियां निकालने के प्रयास में बाल की खाल उतारना।

यीशु के साथ शास्त्री और फरीसी ऐसा ही व्यवहार कर रहे थे।

बहुत से टीकाकारों और कुछ अनुवादकों का मानना है कि मसीह ने ''तिनके'' और ''लट्ठे'' का रूपक इस्तेमाल किया, ज़्योंकि ये चीज़ें एक ही सामग्री से बनती हैं। एक तो बहुत छोटा है और दूसरा बहुत बड़ा, परन्तु दोनों लकड़ी से ही बनते हैं।

तिनके और लट्ठे के एक ही चीज़ से बने होने की सज़्भावना से कुछ दिलचस्प विचार पैदा होते हैं। यह मानवीय स्वभाव की सच्चाई है कि हम अज़्सर अपने जीवनों में पाई जाने वाली कमियों के बजाय दूसरों की कमियों पर अधिक ध्यान देते हैं। मनोवैज्ञानिक इसे ''क्षेपण'' अर्थात जो हम अपने जीवनों में देखते हैं, उसे दूसरों के जीवनों में दिखाना कहते हैं। (अर्थात, हम यह मान लेते हैं कि बाकी सब हमारे जैसे ही हैं।) इसके अलावा, यह एक तथ्य है कि हमारे पाप सामान्यतया उन्हीं बातों के अपने जीवन में होने पर हम उतना बुरा नहीं मानते, जितना दूसरों के जीवनों में पाए जाने पर। बर्टरैंड रसल ने इसे ऐसे समझाया, जिस प्रकार हम परिस्थितियों को देखते हैं: ''मैं दृढ़ हूं; तुम ज़िद्दी हों; वह हठी है। मैंने दोबारा विचार किया है; तुम अपनी बात से मुकर गए हो; वह थूक कर चाट गया है।'' यदि आपको बाइबल में से इसका उदाहरण चाहिए, तो यहूदा और उसकी बहू तामार की कहानी पर विचार करें। जब यहूदा को बताया गया कि तामार ''व्यभिचार'' करके ''गर्भवती'' हो गई है, तो वह उसे मारने पर उतारू हो गया था (उत्पज़ि 38:24); परन्तु जब तामार ने यह साबित कर दिया कि बच्चा उसी का ही है, तो मृत्यु दण्ड का विषय तुरन्त लुप्त हो गया (उत्पज़ि 38:25, 26)।

मसीह ने लकड़ी से बनी दो चीज़ों का उदाहरण जान बूझकर दिया, फिर हमें लट्ठे के आकार वाले पापी की तिनके के आकार वाले वैसे ही पापी से अपने को अच्छा जानने की बेतुकी परिस्थिति मिलती है। रोमियों 2:1–3 में पौलुस ने ऐसी बेमेल बात के बारे में लिखा है:

> सो हे दोष लगाने वाले, तू कोई ज़्यों न हो; तू निरुज़र है! ज़्योंकि जिस बात में तू दूसरे पर दोष लगाता है, उसी बात में अपने आप को भी दोषी ठहराता है, इसलिए कि तू जो दोष लगाता है, आप ही वही काम करता है। और हम जानते हैं, कि ऐसे-ऐसे काम करने वालों पर परमेश्वर की ओर से ठीक-ठीक दण्ड की आज्ञा होती है। और हे मनुष्य, तू जो ऐसे-ऐसे काम करने वालों पर दोष लगाता है, और आप वे ही काम करता है; ज़्या यह समझता है, कि तू परमेश्वर की दण्ड की आज्ञा से बच जाएगा?

यीशु ने इस प्रकार काम करने वालों को कैसे अलग किया? यीशु ने किसी शज़्द को काटा नहीं; मज़ी 7:5 के पहले भाग में, उसने कहा, ''हे *कपटी*''! *कपटी* होना हमें *कपटी* बना देता है। यदि हम दूसरों की आलोचना करते रहें, तो हम यह संकेत दे रहे हैं कि हम पाक-साफ हैं, हमारे जीवन में कोई खोट नहीं है-वरना हम किसी का न्याय कैसे कर सकते हैं। जबकि हमारी अपनी आंखों के सामने टेलीफोन के ये बड़े-बड़े खज़्भे[7] लगे हुए हैं।

फिर, हम कहते हैं कि, न्याय के विषय में, हमें अपने से शुरुआत करनी चाहिए। यीशु ने कहा, '' *पहले* अपनी आंख में से लट्ठा निकाल ले।'' दूसरों के पापों का अंगीकार करना आसान होता है; पर अपने पापों का अंगीकार करना मुश्किल। पौलुस ने अपनी जांच कई संदर्भों में करने की बात की: ''अपने आपको परखो ... ; अपने आपको जांचो'' (2 कुरिन्थियों 13:5क); ''इसलिए मनुष्य अपने आप को जांच ले ...''; ''यदि हम अपने आप को जांचते, तो दण्ड न पाते'' (1 कुरिन्थियों 11:28, 31)। इस संदर्भ रोमियों 14:13 विशेष रूप से प्रासंगिक है। फिलिप के अनुवाद में इस आयत को इस प्रकार लिखा गया है, ''इसलिए एक दूसरे को घूरना बन्द कर दें। यदि आलोचना करनी ही है, *तो हम अपने ही व्यवहार की आलोचना करें* और देखें कि हम किसी भाई को ठोकर लगने या गिरने का कारण नहीं बनते।''[8]

कौन सा पाप/लट्ठा हटाया जाना आवश्यक है? कोई भी पाप हटाया जाना आवश्यक है-परन्तु इस संदर्भ में हम विशेष तौर पर दोष लगाने वाले होने के पाप की बात कर रहे हैं।

अपने आप को जांचने के मामले में, कुछ सहज-बुद्धि आवश्यक है। हम व्यज़्तिगत त्रुटियों और असफलताओं से अस्वस्थ मानसिकता की बात नहीं कर रहे हैं, जिसे कुछ लोग ''स्थाई पोस्टमार्टम'' कहते हैं। तो भी यदि हमें दूसरों के साथ प्रेम से रहना हो, तो हमारी पहली *दिलचस्पी* अपने *ही* जीवनों में परिवर्तन लाने की होनी चाहिए। यदि हम अपने से आरज़्भ करते हैं, तो दूसरों पर दोष लगाने की बहुत कम आवश्यकता पड़ेगी।

अब हम 3 से 5 आयतों से आगे बढ़ सकते हैं, ज़्योंकि हमने इन आयतों के मुज़्य ज़ोर पर पहले विचार कर लिया है-परन्तु इस भाग के अन्त में मैं एक और खूबसूरत सच्चाई पर ज़ोर देना चाहता हूं।

दूसरों के साथ प्रेमपूर्वक रहने की आवश्यकता #3:

हमें विनम्रता और संवेदनशीलता से दूसरों की सहायता करनी आवश्यक है (आयत 5ख)।

यदि हम सचमुच किसी से प्रेम करते हैं और उसके जीवन में पाप देखते हैं, तो हम उस पाप को निकालने के लिए उसकी सहायता करने की कोशिश करेंगे।[9] यह बात आयत 5 के अन्तिम भाग में स्पष्ट है, जिसमें हर किसी को पहले अपनी आंख का लट्ठा निकालने का आदेश देने के बाद, यीशु ने कहा, ''*तब* तू अपने भाई की आंख का तिनका भली-भांति देखकर निकाल सकेगा।'' यीशु ने कहा, कि हमारी प्राथमिकता पहले अपने पापों को दूर करने की होनी चाहिए, परन्तु उसने अपने जीवन ठीक होने के बाद किसी भाई के पाप को दूर करने में सहायता के लिए निरुत्साहित *नहीं* किया।[10]

किसी भाई की उसके मन और जीवन से पाप को निकालने में सहायता की आवश्यकता के बारे में शिक्षा देती कई आयतें हैं:

> हे भाइयो, यदि कोई मनुष्य किसी अपराध में पकड़ा भी जाए, तो तुम जो आत्मिक हो, नम्रता के साथ ऐसे को संभालो, और अपनी भी चौकसी रखो, कि तुम भी परीक्षा में न पड़ो। तुम एक दूसरे के भार उठाओ, और इस प्रकार मसीह की व्यवस्था को पूरा करो (गलातियों 6:1, 2)।

> हे मेरे भाइयो, यदि तुम में कोई सत्य के मार्ग से भटक जाए, और कोई उस को फेर लाए। तो वह यह जान ले, कि जो कोई किसी भटके हुए पापी को फेर लाएगा, वह एक प्राण को मृत्यु से बचाएगा, और अनेक पापों पर पर्दा डालेगा (याकूब 5:19, 20)।

मत्ती 7:3-5 में यीशु का आंख में तिनके का उदाहरण किसी को किसी की सहायता की आवश्यकता की ओर ध्यान दिलाता है, ज़्योंकि आंख संवेदनशील है। आंख में छोटे से छोटा तिनका भी बहुत बड़ा खतरा बन सकता है। यदि आपके बच्चे हैं, तो आपने भी कभी उनके चिल्लाने की आवाज़ सुनी होगी, ''मेरी आंख में कुछ पड़ गया है!''

यह उदाहरण उस ढंग की ओर भी संकेत करता है, जो किसी की सहायता करके अपनाया जाना आवश्यक है। यदि मेरी आंख में कुछ पड़ जाए और आप उसे निकालने के लिए मेरी सहायता करते हैं, तो मैं चाहूंगा कि आप बड़ी सावधानी और सहानुभूति से यह काम करें।[11] हमें दूसरों के साथ व्यवहार करते हुए ऐसे ही संवेदनशील होना आवश्यक है। पौलुस ने ''*नम्रता के साथ* ऐसे को सज़्भालने'' के लिए कहा (गलातियों 6:1)।

पवित्र परमेश्वर के सामने हम सब पापी हैं और एक दिन हम न्याय के लिए उसके सामने उपस्थित होंगे। हर किसी को आत्मिक तौर पर सहायता की आवश्यकता है, सो हम एक दूसरे की

सहायता करें-परन्तु, ऐसा करते हुए, वह सहायता बड़ी सावधानी और करुणापूर्वक करें।

दूसरों के साथ प्रेमपूर्वक रहने की आवश्यकता #4:

हमें भिन्नताओं और कठिनाइयों का सामना करना सीखना आवश्यक है (आयत 6)।

हम ''कुत्तों'' और ''सूअरों'' वाली आयत पर आ गए हैं (आयत 6)। इस में एक पहेली है, क्योंकि यह आयत उस भावना के विरुद्ध जाती लगती है, जो यीशु कह रहा था। क्या हमें दूसरों को ''कुत्ते'' और ''सूअर'' कहकर पुकारना चाहिए? मेरे विचार से यीशु ने ये शब्द वाक्य में संतुलन बनाने के लिए डाले: हमें कपटी, दोष निकालने वाले, स्वयं-भू ''गठरियों के रखवाले'' नहीं बनना चाहिए, परन्तु हमें भोले-भाले भी नहीं बनना चाहिए। परमेश्वर ने हमें समझ दी है, और लोगों के साथ व्यवहार करते हुए वह हम से उस समझ का इस्तेमाल करने की अपेक्षा करता है। हमें निर्दयी और दोष ढूंढ़ने वाले भी नहीं बनना चाहिए, परन्तु लापरवाह और कान के कच्चे भी होना ठीक नहीं है।

यदि यीशु केवल 1 से 5 आयतें ही देता, तो उसने हमें असुरक्षित छोड़ दिया होता, जिन्हें यह डर रहता कि उनसे कोई ऐसा फैसला न हो जाए, जो उनके ही सिर आ पड़े। परन्तु आयत 6 में उसने संकेत दिया कि *कुछ* फैसले हैं, जो हमें दूसरों के बारे में लेने आवश्यक हैं। उसने इसे कुत्तों और सूअरों के हवाले से समझाया: ''पवित्र वस्तु कुत्तों को न दो, और अपने मोती सूअरों के आगे मत डालो; ऐसा न हो कि वे उन्हें पांवों तले रौंदें और पलट कर तुम को फाड़ डालें।''

मसीह के शब्दों के अर्थ पर चर्चा करने से पहले, हमें कुत्तों और सूअरों के स्वभाव को, विशेषकर उस समय के, संदर्भ में समझना आवश्यक है। व्यवस्था के अधीन इन दोनों जानवरों को अशुद्ध माना गया था।[12] कुत्तों पर विचार करते हुए आप इन्हें किसी के पालतू जानवर नहीं, बल्कि खूंखार, आवारा, गन्दे और मरे हुए जानवरों का मांस ढूंढ़ने वाले शिकारी दल समझें। बाइबल में कई बार ''कुत्ता'' शब्द का इस्तेमाल पाप से भरे लोगों के लिए रूपक के रूप में इस्तेमाल किया गया था (मत्ती 15:26; फिलिप्पियों 3:2; प्रकाशितवाक्य 22:15)। यहूदी लोगों के मन में सूअर अशुद्धता का प्रतीक था। इस कारण यदि सभी नहीं, तो पलिश्तीन के अधिकतर सूअर आवारा ही होते थे।

बाद वाली इस बात को कई टीकाकार चूक जाते हैं। आयत 6 से जूझते हुए, वे कहते हैं कि ''पलट कर तुम को न फाड़ डालें'' कुत्तों के लिए कहा गया होगा न कि सूअरों के लिए। इस प्रकार वे इन जानवरों के बारे में अपनी अज्ञानता प्रकट करते हैं। उन्होंने कभी बच्चों वाली सूअरनी को नहीं देखा, यह आभास होने पर कि आप उसके बच्चों के लिए खतरा हैं आपकी टांग काटने की कोशिश करेगी। वे उन जंगली सूअरों की दुष्टता को भी नहीं जानते, जो सबसे खतरनाक जन्तुओं में से हैं।[13]

कुत्तों और सूअरों के स्वभाव को ध्यान में रखते हुए आयत 6 फिर से देखें। यीशु ने एक बार फिर उपहासजनक दृश्य दिखाए। पहले उसने ''पवित्र वस्तु कुत्तों को'' देने की बात की। दोगला कुत्ता पवित्र का महत्व नहीं समझ सकता। कुछ लोगों का मानना है कि यह आयत किसी याजक के बलिदान की वेदी से मांस उठाकर कुत्तों के झुण्ड के आगे डालने की परिस्थिति के बारे में है। ऐसा कभी नहीं, कभी नहीं हो सकता। ज़्योंकि बलिदान किए हुए पशु के बचे हुए सब अंग आग में जला दिए जाते थे (लैव्यव्यवस्था 6:24-30; 7:17)।

फिर यीशु ने ''मोती सूअरों के आगे'' डालने की बात की। जैसे कुत्ते पवित्र का महत्व नहीं समझ सकते, वैसे ही सूअर भी मोतियों की कदर नहीं जानते। यह पता चलते ही कि मोती भोजन नहीं हैं (शायद मोती खाने के प्रयास में दांत टूट जाने पर), वे ''पलट कर तुम्हें फाड़ खाने'' को तैयार होंगे। मुझे बहुत पुरानी बात याद आती है, जब मैं सूअरों को चारा डालने के लिए दिन चढ़ने से पहले उठ जाया करता था। एक पुरानी लोहे की बाल्टी में भोजन मिलाने की आवाज सुनकर सूअर खूंखार हो जाते थे। उनके खूंटे तक पहुंचने पर, वे चीखते और एक दूसरे पर चढ़ जाते थे। तब मुझे उनकी खाने की हौदी में खाना डालने में बड़ी दिक़्कत आती थी, जिसमें स्पष्टतया तीन-चार भूखे सूअर घुस आते थे। मैं यकीन से कह सकता हूं कि यदि मैं अनाज मिले चारे के बजाय हौदी में मोती डाल देता, तो सूअरों को इसका पता चलते ही मैं यह प्रार्थना कर रहा होता कि कहीं बाड़ न टूट जाए!

अब हमें यह पूछना चाहिए है कि ''यीशु ने 'कुत्ते' और 'सूअर' किसे कहा?'' इस प्रश्न का उत्तर यह पूछकर दिया जा सकता है कि '' 'पवित्र' और 'मोती' किसे कहा गया है?'' यीशु ने राज्य (कलीसिया) को ''बहुमूल्य *मोती*'' कहा (मत्ती 13:45, 46)। राज्य (कलीसिया) के संदेश को शुभ समाचार (सुसमाचार) कहा जाता है (देखें मत्ती 4:23; 9:35; 24:14)। परमेश्वर का वचन *पवित्र* है (रोमियों 1:2; 2 पतरस 2:21), और इस पवित्र संदेश को ''धन'' कहा गया है (2 कुरिन्थियों 4:7)।

इस कारण, अधिकतर टीकाकारों का मानना है कि मसीह उन लोगों को वचन देने के विरुद्ध चेतावनी दे रहा था, जो आत्मिक बातों को कम महत्व देते हैं: जो सच्चाई को ठुकराते, तीतुस 1:15 में वर्णित लोग ''अशुद्ध और अविश्वासी'' हैं और जिनकी ''बुद्धि और विवेक दोनों अशुद्ध हैं।'' यीशु के मन में शास्त्री और फरीसी होंगे, जो उसके वचनों को मानने से इनकार करते थे।

कुछ टीकाकार आयत 6 की इस व्याख्या का अपवाद लेते हैं, परन्तु मेरा मानना है कि यह इस आयत की सबसे सरल व्याख्या है और पवित्र शास्त्र के अन्य पदों से मेल खाती है। ''सीमित आज्ञा'' या लिमिटेड कमीशन देते हुए यीशु ने अपने चेलों को बताया था कि जब लोग उन्हें ठुकरा दें तो वे अपने जूते झाड़कर[14] आगे निकल जाएं (मत्ती 10:13, 14)।[15] यहूदियों ने जब भी यहूदियों ने पौलुस को ठुकराया, तो वह अन्यजातियों के पास चला गया (प्रेरितों 13:44-51; 18:5, 6; 19:9; 28:17-28)।

यह फैसला करना कठिन है। हमें पहले से यह फैसला करने का अधिकार नहीं है कि

''कुज़ा'' या ''सूअर'' कौन है। प्रेम सदैव भला ही सोचता है और हमें हर किसी को सुसमाचार सुनने का अवसर देना आवश्यक है (मत्ती 28:18-20; मरकुस 16:15, 16)। दूसरी ओर, यदि हम लगातार किसी को सिखाने की कोशिश करते रहें और वह हमें ठुकराता रहे, तो एक समय ऐसा आएगा कि सहज-बुद्धि (और अपने समय के भण्डारी होने[16]) के कारण हम कहेंगे, ''अपने मोती सूअरों के आगे डालना छोड़कर हम किसी और को सिखाने के लिए ढूंढ़ेंगे।''[17]

7:1-12 में यीशु के उदाहरणों से यह स्पष्ट हो गया कि हमारा वास्ता कई तरह के लोगों से पड़ेगा और हमें यह सीखना आवश्यक है कि हम उनमें से हर एक को कैसे सम्भालते हैं। कई ऐसे दुखी लोग भी हैं, जिनकी आंखों में तिनके हैं, जिन्हें हमारे प्रेम और स्नेह की आवश्यकता है। ऐसे सूअर और कुज़े भी हैं, जो बिल्कुल सहायता के योग्य नहीं हैं। वे उनके निकट जाने के हमारे किसी भी प्रयास का विरोध करेंगे। उनकी दिलचस्पी हम में केवल इसलिए है कि वे हमें फाड़ना चाहते हैं। ऐसे लोगों के साथ व्यवहार का केवल एक ही ढंग है कि उन्हें अकेले छोड़ दिया जाए।

उस स्त्री के साथ, जिसने अपने आंसुओं से यीशु के पांव धोए थे (लूका 7:36-50) और व्यभिचार में पकड़ी गई स्त्री के साथ उसकी कोमलता पर विचार करें (यूहन्ना 8:2-11)। मत्ती 23 अध्याय वाले कठोर मन के शास्त्रियों और फरीसियों के साथ उसके अति कटुतापूर्ण ढंग से निन्दा करने में अन्तर करें। उसने बार-बार, कहा, ''*हे कपटी* शास्त्रियों और फरीसियो तुम पर हाय'' (आयतें 13-15, 23, 25, 27, 29)।

मसीह ने कुज़ों या सूअरों को गोली मारने के लिए नहीं कहा। उसने केवल उन्हें अकेले छोड़ देने के लिए कहा: पवित्र वस्तुएं उन्हें न डालो; उन्हें मोती न दो। यहां पौलुस की ताड़ना उपयुक्त है: ''जहां तक हो सके, तुम भरसक सब मनुष्यों के साथ मेल मिलाप रखो'' (रोमियों 12:18)।

दूसरों के साथ प्रेमपूर्वक रहने की आवश्यकता #5:

हमें परमेश्वर पर भरोसा रखने का निश्चय करना आवश्यक है (आयतें 7-11)।

यह हमें प्रार्थना की सामर्थ के महान भाग, 7 से 11 आयतों तक ले आता है। इस वचन में मैं इन आयतों पर विस्तार से बात नहीं करूंगा। बल्कि मेरा उद्देश्य यह सुझाव देना है कि यह पद किस प्रकार उस विषय के संदर्भ अर्थात दूसरों के साथ प्रेमपूर्वक कैसे रहें मेल खाता है, जिस पर हम चर्चा कर रहे हैं।

इन वचनों से हमने सीखा है कि हमें दोष लगाने वाले नहीं, बल्कि दया करने वाले और कोमल मन वाले होना चाहिए। साथ ही यह भी ज़ोर दिया गया है कि हम कठोर न हों अर्थात हमें यह पता होना आवश्यक है कि अपने पांवों की धूल कब झाड़नी है। ये

निर्णय लेने कठिन हैं। हम अपने आप को कठोर होने से कैसे रोक सकते हैं, जब हमें कोमल होने की आवश्यकता हो, या कोमल कैसे हो सकते हैं, जब कठोर होना आवश्यक हो? 7 से 11 आयतें इसका उज़र देती हैं। हमें परमेश्वर पर निर्भर रहना चाहिए:

> मांगो, तो तुम्हें दिया जाएगा। ढूंढ़ो, तो तुम पाओगे। खटखटाओ, तो तुम्हारे लिए खोला जाएगा। क्योंकि जो कोई मांगता है, उसे मिलता है; जो ढूंढ़ता है, वह पाता है और जो खटखटाता है, उसके लिए खोला जाएगा। तुम में से ऐसा कौन मुनष्य है, कि यदि उसका पुत्र उससे रोटी मांगे, तो वह उसे पत्थर दे? व मछली मांगे, तो उसे सांप दे? सो जब तुम बुरे होकर, अपने बच्चों को अच्छी वस्तुएं देना जानते हो, तो तुम्हारा स्वर्गीय पिता अपने मांगने वालों को अच्छी वस्तुएं क्यों न देगा!

कितनी सुन्दर आयतें हैं ये! परमेश्वर प्रार्थना का उज़र देता है! अपने बच्चों की आवश्यकताओं और विनतियों को मानने वाले प्रेमी पिता की तरह परमेश्वर हमारी बातों का जवाब देता है।

ये आयतें कई प्रकार से हमारे विषय से जुड़ी हैं। उदाहरण के लिए, परमेश्वर हम पर करुणा करता है, और इससे यह संकेत मिलता है कि हमें एक दूसरे के प्रति दयालु होना आवश्यक है। विशेषकर, यह ज़ोर देता है कि हम अपनी आवश्यकताओं को परमेश्वर को बता सकते हैं–इस मामले में दूसरों के साथ व्यवहार का ढंग जानने की आवश्यकता है। इस सम्बन्ध में याकूब 1:5क से मिलता जुलता ही संदेश है: ''पर यदि तुम में से किसी को बुद्धि की घटी हो, तो परमेश्वर से मांगे।''

आयत 11 कहती है कि परमेश्वर ''अपने मांगने वालों को *अच्छी* वस्तुएं'' देता है! कोई कह सकता है, ''बड़ा घर ठीक रहेगा ... या बड़ी गाड़ी ... या अधिक वेतन वाला काम''–परन्तु सचमुच ''अच्छा'' क्या है? क्या आत्मिक दान इससे भी अच्छे हैं? इनमें से एक परखने वाला मन अर्थात: यह जानने की क्षमता होगी कि हर तरह के लोगों से कैसे व्यवहार करना है। यदि आप सचमुच लोगों के साथ प्रेम से रहना चाहते हैं, यदि आपकी दृष्टि में सम्बन्ध महत्वपूर्ण हैं, तो आप अधिकांश समय प्रार्थना में बिताएंगे।

दूसरों के साथ प्रेमपूर्वक रहने की आवश्यकता #6:

हमारा जीवन सुनहरी नियम के अनुसार होना आवश्यक है (आयत 12)।

अन्त में हम आयत 12 पर आते हैं। इस आयत को पहाड़ी उपदेश का चरम कहा गया है। निश्चय ही, यह दूसरों के साथ मिलकर रहने पर चर्चा का चरम है। ''इस कारण जो कुछ तुम चाहते हो ...।'' एक अर्थ में, इसमें मानवीय सम्बन्धों पर उपदेश की सब बातों का सार है–चाहे वह भाई या शत्रु के साथ हो, या मित्र या शत्रु के साथ। विशेषकर यह दूसरों के साथ सम्बन्ध रखने की उन बातों का सार है, जो हमने मत्ती 7:1–11 में सीखी हैं:

''इस कारण जो कुछ तुम चाहते हो, कि मनुष्य तुम्हारे साथ करे, तुम भी उनके साथ वैसा ही करो; ज़्योंकि व्यवस्था और भविष्यवज़्ताओं की शिक्षा यही है।'' सज़्भवतया यह यीशु की सर्वमान्य बात है। लगभग हर कोई[18] इन शज़्दों को सराहता है; इस नियम के अनुसार जीवन न बिताने वाले भी इसकी तारीफ करते हैं।

यीशु से पहले, आयत 12 के सिद्धान्त को कइयों ने नकारात्मक रूप में बताया था: ''दूसरों के साथ वैसा *न* करो, जैसा आप *नहीं* चाहते कि वे आपके साथ रहें।'' ये शज़्द कहने वालों में सुकरात, अरस्तु, हिलेल (प्रसिद्ध यहूदी शिक्षक), कन्ज़्यूशियस (चीनी शिक्षक), और बुद्ध शामिल थे। परन्तु इसे सकारात्मक ढंग से कहने वाला पहला व्यज़्ति यीशु ही था: ''दूसरों के साथ ... *करो* ।''

नकारात्मक और सकारात्मक ढंगों में बहुत अन्तर है–''नहीं'' शज़्द को शामिल करने या निकालने से कहीं अधिक है। नकारात्मक कथन ज़्यादातर सुरक्षा के लिए होता है, जबकि सकारात्मक अपने आप को भूल जाना है। कुछ न करके नकारात्मक को पूरा किया जा सकता है,[19] जबकि सकारात्मक को पूरा करने के लिए भला करना आवश्यक है। नकारात्मक फिलॉस्फी को समझने के लिए धार्मिक होने की आवश्यकता नहीं है, ज़्योंकि जीवन को देखने का यह प्राकृतिक ढंग है–परन्तु दूसरे वाला सच्चे धर्म का आधार है (आयत 12ख)। अंग्रेज़ी के फिलिप के अनुवाद में ''सच्चे धर्म का यही सार है''[20] है।

यह पद चर्चा के अन्त में आता है, ज़्योंकि यह पहले होने वाली बात का निष्कर्ष बताता है, परन्तु यह यहां इसलिए भी है, ज़्योंकि यह उस सिद्धान्त की घोषणा करता है, जिसमें सज़्बन्धों में पैदा होने वाली एक हज़ार से अधिक अन्य परिस्थितियां शामिल होंगी। कल्पना करें कि आपके पास एक किताब थी, जिस पर सज़्बन्धों की हर समस्या पर चर्चा की गई है। यह अहसास करने की कोशिश करें कि किताब कितनी बड़ी होगी। फिर कल्पना करें कि आप किसी से मिल रहे हैं और कोई संकट पैदा हो गया है। आप उस समस्या से निपटने का ढंग उस पुस्तक में ढूंढ़ने के लिए पूरी किताब छान मारते हैं। एक घण्टे या इससे थोड़ी देर बाद, आपको वह उज़र मिल जाता है, जिसकी आपको तलाश थी–परन्तु तब तक दूसरा व्यज़्ति चला जाता है। वास्तव में आपको ऐसी किताब देने के बजाय, यीशु ने कहा, ''इस समस्या का हल यह है: अपने आप से पूछें, 'यदि परिस्थिति इसके विपरीत होती तो? मैं अपने साथ कैसा व्यवहार चाहता?' फिर दूसरे व्यज़्ति के साथ वैसा ही करें।''

कितना आसान है, परन्तु है कितना गज़्भीर! ज़्या आप कल्पना कर सकते हैं कि यदि जीवन इस आधार पर चले तो संसार कैसा होगा? ज़्या हो यदि हर कारोबार में ऐसा ही हो? ज़्या हो यदि हर कर्मचारी दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करे, जैसा वह अपने साथ चाहता है? ज़्या हो यदि हर संगठन इस सिद्धान्त को माने? ज़्या हो, यदि हर घर में, हर स्कूल में, हर देश में, हर मण्डली में लोगों के साथ वैसा ही व्यवहार हो जैसा वे चाहते हैं?

यह कहने के लिए कि प्रभु हम से सहज–बुद्धि का इस्तेमाल करने की अपेक्षा करता है, मैं अन्तिम बार रुकता हूं। मज़ी 7:12 यह मानकर चलता है कि जब हम अपने आप को

दूसरों की जगह रखते हैं, तो हम *कितना अच्छा* व्यवहार करेंगे कि हम उनका बुरा नहीं चाहेंगे, और यह *इतना* समझदारी वाला काम होगा कि मूर्खता की आवश्यकता ही नहीं होगी।[21] वरना, शराबी व्यज़्ति दलील दे सकता है, ''मैं तो यह चाहता हूं कि लोग मुझे शराब देते रहें, ताकि मैं उनके साथ वैसा ही करूं, जैसा मैं चाहता हूं कि वे मेरे साथ करें–और सबको दारू की बोतलें बांटता रहूं।''[22] व्यज़्तिगत उदाहरण का इस्तेमाल करते हुए, मैं तर्क दे सकता हूं, ''मुझे प्याज वाली कलेजी खाना अच्छा लगता है,[23] सो अगली बार जब मैं खाना बनाऊं, तो मैं अपनी पत्नी के लिए कलेजी और प्याज ही बनाऊंगा''–यह जानने के बावजूद कि उसे कलेजी और प्याज *पसन्द नहीं*।

मेरे विचार से हम में से अधिकतर लोग इस बात की समझ रखते हैं कि इस सुनहरी नियम में ज़्या कहा गया है। इस पद में सामान्य सच्चाइयों का हवाला है, जो सब लोगों पर लागू होती हैं। हम सब कोमलता और करुणापूर्ण व्यवहार चाहते हैं, सो हमें दूसरों के साथ वैसा ही बर्ताव करना चाहिए। हम चाहते हैं कि लोग हमारी तारीफ करें, सो हमें भी दूसरों की तारीफ करनी चाहिए। हम चाहते हैं कि लोग हमारी अच्छी बातों को जानें, जो हम करते हैं उसकी प्रशंसा हो, सो हमें भी दूसरों के साथ वैसा ही करना चाहिए। इस सूची को बढ़ाया जा सकता है: हम कोशिश करते हैं कि लोग हमें समझें, हमारी मूर्खताओं पर ध्यान न दें, हमें क्षमा कर दें–सो हम भी ''दूसरों के साथ वैसा ही करें'' जैसा हम चाहते हैं कि वे हमारे साथ करें।

ऐसे संसार में रहना अद्‌भुत नहीं होगा, जहां हर कोई एक दूसरे के साथ वैसा ही व्यवहार करेगा? ज़्या यह अद्‌भुत नहीं होगा कि *हम* हर किसी के साथ ऐसा व्यवहार करें?

सारांश

मैंने सुना है कि गांधी जी[24] आरज़्भ में मसीहियत से विशेषकर पहाड़ी उपदेश की शिक्षाओं से, जिनमें यह सुनहरी नियम भी शामिल है प्रभावित हुए थे। जब उनसे पूछा गया कि वह मसीही ज़्यों नहीं बने, तो उन्होंने दुखी होकर उज़र दिया था कि उन्होंने किसी मसीही व्यज़्ति को उन सिद्धान्तों पर *चलते* नहीं देखा। ज़्या मैं उन सिद्धान्तों पर चलता हूं, जिनका हमने अध्ययन किया है? ज़्या आप चलते हैं?

मज़ी 7:1–12 के बाद ये प्रसिद्ध शज़्द मिलते हैं:

> सकेत फाटक से प्रवेश करो, ज़्योंकि चौड़ा है वह फाटक और सरल है वह मार्ग जो विनाश को पहुंचाता है; और बहुतेरे हैं जो उससे प्रवेश करते हैं। ज़्योंकि सकेत है वह फाटक और कठिन है वह मार्ग जो जीवन को पहुंचाता है, और थोड़े हैं जो उसे पाते हैं (आयतें 13, 14)।

यह सुझाव देकर कि वह फाटक इतना तंग है कि उसमें केवल वही लोग प्रवेश करेंगे ...

- जो दोष लगाने वाले न हों?
- जो पहले अपने जीवनों में परिवर्तन करने की आवश्यकता को समझें?
- जो विनम्रता से और संवेदनशीलता से दूसरों की सहायता करें?
- जिन्होंने भिन्नताओं और कठिनाइयों का सामना करना सीख लिया है?
- जिन्होंने परमेश्वर पर निर्भर रहने का निश्चय कर लिया है?
- जिनका जीवन सुनहरी नियम के अनुसार है?

हां, मैं जानता हूं कि मत्ती 7:13, 14 मानवीय सम्बन्धों से कहीं अधिक प्रासंगिक होना चाहिए, परन्तु इस पद में मानवीय सम्बन्ध भी शामिल हैं। दूसरों के साथ प्रेमपूर्वक रहना कितना आवश्यक है!

क्या अतीत में आप दूसरों के साथ वैसा व्यवहार करने में सफल रहे हैं, जैसा आपको करना चाहिए था? मैं भी रहा हूं। क्या यह अहसास करना अद्भुत नहीं है, यदि हम मन फिराकर भविष्य में बेहतर करने का निश्चय कर लें कि परमेश्वर अपने अनुभवों के द्वारा हमारी उन कमियों को क्षमा कर देगा?[25] इस प्रवचन की मुख्य बात यह है कि हमें *पहले* अपने जीवनों में परिवर्तन की आवश्यकता पर ध्यान देना आवश्यक है। यह समय अपने आप को जांचने का है। यदि आपका जीवन पुकार पुकारकर कह रहा है, कि आप अपने में आवश्यक परिवर्तन लाएं, तो हम आपकी सहायता कर सकते हैं, कृपया हमें अवश्य बताएं।[26]

टिप्पणियां

[1]एक पुराने अंग्रेज़ी शब्द से जिसका अर्थ ''कोई बहुत छोटी चीज़'' है, KJV में ''mote'' है। [2]कुछ लोगों का मानना है कि यह मकान खड़ा रखने के लिए लगाई जाने वाली लकड़ी या छत में डाला जाने वाला शहतीर था। जो भी हो, यह लकड़ी का एक *बड़ा* टुकड़ा था। [3]एक और उदाहरण के लिए, देखें मत्ती 23:24. [4]लट्ठा पड़ी आंख वाले व्यक्ति द्वारा तिनका पड़ी आंख वाले व्यक्ति की सहायता करना मेरे द्वारा किसी नौजवान की सहायता करने की तरह है। (मेरा ''माथा गंजा'' है [लैव्यव्यवस्था 13:41]।) [5]अर्थात, वह उसे मारने को तैयार हो गया। [6]मत्ती 7:3 में यूनानी शब्द *blepo* ''देखना'' के लिए सामान्य शब्द के बजाय ''अधिक स्पष्टता का संकेत करता'' है और ''अधिक अर्थपूर्ण, गम्भीर चिन्तन'' को व्यक्त करता है (डब्ल्यू. ई. वाईन, *द एक्सपैन्डड वाईन'स एक्सपोज़िटरी डिक्शनरी ऑफ़ न्यू टैस्टामेंटस वर्ड्स,* सं. जॉन आर. कोहलेन्बर्गर III विद जेक्स ए. स्वैन्सन [मिनियापुलिस: बैथनी हाउस पब्लिशर्स, 1984], 106)। [7]मेरे सुनने वालों के लिए टेलीफोन का खम्भा ''शहतीर'' या ''लट्ठा'' जैसा ही है। आप ऐसे शब्द का इस्तेमाल करें, जिससे आपके सुनने वाले परिचित हों। [8]जे. बी. फिलिप्स, *ए न्यू टैस्टामेंट इन मॉडर्न इंग्लिश* (न्यू यॉर्क: मैकमिलन कं., 1958), 344. [9]प्रेम की एक उत्कृष्ट परिभाषा में इसका संकेत मिलता है: ''प्रेम अपने प्रिय का भला ही चाहता है।'' सच्चा प्रेम प्रेमी के जीवन में पाप को नज़रअन्दाज नहीं कर सकता, उस पाप को जो उसके प्राण की हानि कर सकता है। मत्ती 18:15 भी देखें। [10]मत्ती 5:23, 24 से एक समानता बनाई जा सकती है, जहां यीशु ने कहा कि ''... *पहले* अपने भाई से मेल मिलाप कर; तब आकर अपनी भेंट

चढ़ा।'' मसीह की मंशा भेंट लाने वालों को निरुत्साहित करना नहीं थी; बल्कि वह तो इस बात पर ज़ोर दे रहा था कि भेंट चढ़ाने से *पहले* ज़्या आवश्यक था।

[11]यदि आप किसी से अपनी आंख का तिनका निकालने के लिए कहें और वह आपकी ओर चाकू लेकर आ जाए, तो आपकी प्रतिक्रिया ज़्या होगी? [12]सूअर को विशेष तौर पर ''अशुद्ध'' (लैव्यव्यवस्था 11:7) जानवर माना जाता था; कुज़ा ''अशुद्ध'' था ज़्योंकि इसके खुर फटे नहीं होते और न यह पागुर करता है (आयतें 3, 4)। [13]हमारे यहां, हम पुराने समय के प्रसिद्ध ''रेज़रबैक'' की बात कर सकते हैं। दूसरी जगहों पर इसे जंगली सूअर, मोटी चमड़ी आदि कहा जा सकता है। [14]यह यह संकेत देने का कि ''मेरा अब तुम से कोई सज़्बन्ध नहीं'' सांकेतिक ढंग था। [15]यीशु स्वयं सूअरों के आगे मोती डालने से परहेज़ करता था: कई बार उसने फरीसियों को उज़र नहीं दिया (मज़ी 15:2, 3; 21:23-27)। उसने हेरोदेस से बात नहीं की (लूका 23:9)। [16]इफिसियों 5:16. [17]इस प्रवचन में से सुनाते हुए, मैंने व्यज़्तिगत उदाहण का इस्तेमाल किया: ''जब हम जापान गए थे, तो मैं उन लोगों के साथ जिन्हें अंग्रेज़ी नहीं आती थी बात करने की कोशिश नहीं करता था। जब मुझे पता चला कि किसी को पता नहीं है कि मैं ज़्या कह रहा हूं, तो मैं अगले व्यज़्ति के पास चला।'' आपका भी कोई ऐसा ही अनुभव हो सकता है, जिसे आप बता सकते हैं। [18]कुछ लोग होंगे जो इसे पसन्द नहीं करते; वे दूसरों की भावनाओं पर विचार करने को कमज़ोरी मानते हैं। [19]नकारात्मक अभिव्यज़्ति के आधार पर, मज़ी 25 अध्याय में श्रापित ''बकरियां'' बचाई जा सकती थीं। आवश्यक नहीं कि उन्होंने कोई बुराई की हो, परन्तु उन्होंने भलाई करने को नज़रअन्दाज किया था (देखें आयतें 31, 32, 41, 42)। [20]फिलिप्स, 14.

[21]जे. डज़्ल्यू. मैज़्गर्वे एण्ड फिलिप्प वाई. पैंडलटन, *द फ़ोरफ़ोल्ड गॉस्पल ऑर ए हारमनी ऑफ़ द फोर गॉस्पल्स* (सिंसिनटी: स्टैण्डर्ड पज़्लिशिंग कं., 1914), 265 से लिया गया। [22]''दारू'' शराब के लिए प्राश्चित शज़्द है। [23]कलेजी (बकरे की हो या सूअर की) अच्छी तरह प्याज के साथ भूनकर खाना अमेरकियों का पसन्दीदा खाना है। गन्ध से भरा यह मिश्रण कइयों को अच्छा लगता है और कइयों को नहीं। [24]महात्मा गांधी (1869-1948), भारत की स्वतन्त्रता लहर का एक अगुआ। बीसवीं शताज़्दी के अति प्रभावशाली अगुओं में से एक। [25]भविष्य में बेहतर करने का निश्चय सच्चे मन फिराव का भाग है। [26]जब आप इस प्रवचन में से सुनाएं, तो आपको चाहिए कि आप बाहरी पापियों को-जो कभी मसीह के पास नहीं आए-बता दें कि उद्धार कैसे पाना है (यूहन्ना 3:16; मरकुस 16:16) और भटके हुए मसीही कैसे वापस आ सकते हैं (प्रेरितों 8:22; याकूब 5:16)। आखिर, आत्मिक परिवर्तन से बड़े परिवर्तन की आवश्यकता ज़्या हो सकती है।